अथान्त्येष्टिकर्मविधिं वक्ष्यामः

'अन्त्येष्टि' कर्म उस को कहते हैं कि जो शरीर के अन्त का संस्कार है, जिस के आगे उस शरीर के लिए कोई भी अन्य संस्कार नहीं है। इसी को नरमेध, पुरुषमेध, नरयाग, पुरुषयाग भी कहते हैं ।

भस्मान्तꣳ शरीरम् । —यजुः अ० ४० । मं० १५॥

निषेकादिश्मशानान्तो मन्त्रैर्यस्योदितो विधिः ॥ —मनु०

अर्थ—इस शरीर का संस्कार (भस्मान्तम्) अर्थात् भस्म करने पर्यन्त है ॥१॥

शरीर का आरम्भ ऋतुदान और अन्त में श्मशान अर्थात् मृतक कर्म है ॥२॥

(प्रश्न) गरुडपुराण आदि में दशगात्र, एकादशाह, द्वादशाह, सपिण्डी कर्म, मासिक, वार्षिक, गयाश्राद्ध आदि क्रिया लिखी हैं, क्या ये सब असत्य हैं ?

(उत्तर) हाँ, अवश्य मिथ्या हैं, क्योंकि वेदों में इन कर्मों का विधान नहीं है । इसलिए अकर्त्तव्य हैं और मृतक जीव का सम्बन्ध पूर्व सम्बन्धियों के साथ कुछ भी नहीं रहता, और न इन जीते हुए सम्बन्धियों का । वह जीव अपने कर्म के अनुसार जन्म पाता है ।

(प्रश्न) मरण के पीछे जीव कहाँ जाता है ?

(उत्तर) यमालय को ।

(प्रश्न) यमालय किस को कहते हैं ?

(उत्तर) वाय्वालय को ।

(प्रश्न) वाय्वालय किस को कहते हैं ?

(उत्तर) अन्तरिक्ष को, जो कि यह पोल है ।

(प्रश्न) क्या गरुडपुराण आदि में यमलोक लिखा है वह झूठा है ?

(उत्तर) अवश्य मिथ्या है ।

(प्रश्न) पुनः संसार क्यों मानता है ?

(उत्तर) वेद के अज्ञान और उपदेश के न होने से । जो यम की कथा लिख रक्खी है, वह सब मिथ्या है, क्योंकि **'यम'** इतने पदार्थों

का नाम है–

षळिद् यमा ऋषयो देवजा इति ॥१॥

–ऋ० म० १। सू० १६४ । मं० १५॥

शकेम वाजिनो यमम् ॥२॥ –ऋ० म० २। सू० ५ । मं० १॥

यमाय जुहुता हविः। यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः ॥३॥

–ऋ० म० १०। सू० १४ । मं० १३॥

यमः सूयमानो विष्णुः सम्भ्रियमाणो वायुः पूयमानः ॥४॥

–यजु० अ० ८। मं० ५७॥

वाजिनं यमम् ॥५॥ –ऋ० म० ८। सू० २४ । मं० २२॥

यमं मातरिश्वानमाहुः ॥६॥ –ऋ० म० १। सू० १६४ । मं० ४६॥

अर्थ–यहां ऋतुओं का यम नाम ॥१॥

यहां परमेश्वर का नाम ॥२॥

यहां अग्नि का नाम ॥३॥

यहां वायु, विद्युत्, सूर्य के यम नाम हैं ॥४॥

यहां भी वेगवाला होने से वायु का नाम यम है ॥५॥

यहां परमेश्वर का नाम यम है ॥६॥

इत्यादि पदार्थों का नाम **'यम'** है । इसलिए पुराण आदि की सब कल्पना झूठी है ।

विधि–

संस्थिते भूमिभागं खानयेद् दक्षिणपूर्वस्यां दिशि दक्षिणापरस्यां वा ॥१॥

दक्षिणाप्रवणं प्राग्दक्षिणाप्रवणं वा प्रत्यग्दक्षिणाप्रवणमित्येके ॥२॥

यावानुद्बाहुकः पुरुषस्तावदायामम् ॥३॥

व्याममात्रं तिर्यक् ॥४॥

वितस्त्यर्वाक् ॥५॥

केशश्मश्रुलोमनखानीत्युक्तं पुरस्तात् ॥६॥

द्विगुल्फं बर्हिराज्यं च ॥७॥

दधन्यत्र सर्पिरानयन्त्येतत् पित्र्यं पृषदाज्यम् ॥८॥

अथैतां दिशमग्नीन् नयन्ति यज्ञपात्राणि च ॥९॥

अर्थ–जब कोई मर जावे तब यदि पुरुष हो तो पुरुष और स्त्री हो

तो स्त्रियां उस को स्नान करावें। चन्दनादि सुगन्धलेपन और नवीन वस्त्र धारण करावें। जितना उस के शरीर का भार हो उतना घृत यदि अधिक सामर्थ्य हो तो अधिक लेवें और जो महादरिद्र भिक्षुक हो कि जिस के पास कुछ भी नहीं है, उसे कोई श्रीमान् वा पञ्च बनके आध मन से कम घी न देवें, और श्रीमान् लोग शरीर के बराबर तोलके चन्दन, सेर भर घी में एक रत्ती कस्तूरी, एक मासा केसर, एक-एक मन घी के साथ सेर-सेर भर अगर-तगर और घृत में चन्दन का चूरा भी यथाशक्ति डाल कपूर, पलाश आदि के पूर्ण काष्ठ, शरीर के भार से दूनी सामग्री श्मशान में पहुंचावें। तत्पश्चात् मृतक को वहां श्मशान में ले जायें।

यदि प्राचीन वेदी बनी हुई न हो तो नवीन वेदी भूमि में खोदे। वह श्मशान का स्थान बस्ती से दक्षिण तथा आग्नेय अथवा नैर्ऋत्य कोण में हो, वहां भूमि को खोदे। मृतक के पग दक्षिण, नैर्ऋत्य अथवा आग्नेय कोण में रहें। शिर उत्तर ईशान वा वायव्य कोण में रहे ॥१॥

मृतक के पग की ओर वेदी के तले में नीचा और शिर की ओर थोड़ा ऊंचा रहे ॥२॥

उस वेदी का परिमाण पुरुष खड़ा होकर ऊपर को हाथ उठावे उतनी लम्बी और दोनों हाथों को लम्बे उत्तर दक्षिण पार्श्व में करने से जितना परिमाण हो, अर्थात् मृतक के साढ़े तीन हाथ अथवा तीन हाथ ऊपर से चौड़ी होवे, और छाती के बराबर गहरी होवे ॥३॥

और नीचे आध हाथ अर्थात् एक बीता भर रहे [॥४॥]

उस वेदी में थोड़ा-थोड़ा जल छिटकावे। यदि गोमय उपस्थित हो तो लेपन भी करदे। उस में नीचे से आधी वेदी तक लकड़ियाँ चिने, जैसे कि भित्ती में ईंटे चिनी जाती हैं, अर्थात् बराबर जमाकर लकड़ियाँ धरे। लकड़ियों के बीच में थोड़ा-थोड़ा कपूर थोड़ी-थोड़ी दूर पर रक्खे। उस के ऊपर मध्य में मृतक को रक्खे, अर्थात् चारों ओर वेदी बराबर खाली रहे। और पश्चात् चारों ओर और ऊपर चन्दन तथा पलाश आदि के काष्ठ बराबर चिने। वेदी से ऊपर एक बीता भर लकड़ियाँ चिने।

जब तक यह क्रिया होवे, तब तक अलग चूल्हा बना अग्नि जला घी तपा और छानकर पात्रों में रक्खे। उसमें कस्तूरी आदि सब पदार्थ मिलावे। लम्बी-लम्बी लकड़ियों में चार चमसों को, चाहे वे लकड़ी के हों वा चांदी सोने के अथवा लोहे के हों, जिस चमसा में एक छटांकभर से अधिक और आधी छटांक भर से न्यून घृत न आवे, खूब दृढ़ बन्धनों से डण्डों के साथ बांधे। पश्चात् घृत का दीपक करके कपूर में लगाकर शिर से आरम्भ कर पादपर्यन्त मध्य-मध्य में अग्नि-

प्रवेश करावे । अग्नि-प्रवेश कराके-

ओमग्नये स्वाहा ॥१॥
ओं सोमाय स्वाहा ॥२॥
ओं लोकाय स्वाहा ॥३॥
ओमनुमतये स्वाहा ॥४॥
ओं स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ॥५॥

इन ५ पांच मन्त्रों से आहुतियां देके अग्नि को प्रदीप्त होने देवे। तत्पश्चात् ४ चार मनुष्य पृथक्-पृथक् खड़े रहकर वेदों के मन्त्रों से आहुति देते जायें जहां 'स्वाहा' आवे वहां आहुति छोड़ देवें ।

अथ वेदमन्त्राः

सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा ।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वाहा ॥१॥

अजो भागस्तपसा तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः ।
यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतामु लोकं स्वाहा ॥२॥

अवसृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः ।
आयुर्वसान उपवेतु शेषः सं गच्छतां तन्वा जातवेदः स्वाहा ॥३॥

अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व संप्रोर्णुष्व पीवसा मेदसा च ।
नेत्त्वा धृष्णुर्हरसा जर्हृषाणो दधृग्विधक्ष्यन् पर्यङ्खयाते स्वाहा ॥४॥

यं त्वमग्ने समदहस्तमु निर्वापया पुनः ।
कियाम्ब्वत्र रोहतु पाकदूर्वा व्यल्कशा स्वाहा ॥५॥

-ऋ० म० १० । सू० १६ । मं० ३-५, ७, १३ ॥

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् ।
वैवस्वतं सङ्गमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य स्वाहा ॥६॥
यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या३ अनु स्वाः स्वाहा ॥७॥
मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः ।
याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति स्वाहा ॥८॥
इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः ।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन्हविषा मादयस्व स्वाहा ॥९॥

अङ्गिरोभिरा गहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व ।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य स्वाहा ॥१०॥
प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः ।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवं स्वाहा ॥११॥
सं गच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः स्वाहा ॥१२॥
अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै स्वाहा ॥१३॥
यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः ।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः स्वाहा ॥१४॥
यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत ।
स नो देवेष्वा यमद् दीर्घमायुः प्र जीवसे स्वाहा ॥१५॥
यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन ।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः स्वाहा ॥१६॥

—ऋ० मं० १० । सू० १४ । मं० १–५, ७–९, १३–१५॥

कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रध्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान् ।
हिरण्यरूपं जनिता जजान स्वाहा ॥१७॥

—ऋ० म० १० । सू० २० । मं० ९॥

इन ऋग्वेद के मन्त्रों से चारों जने सत्रह–सत्रह आज्याहुति देकर, निम्नलिखित मन्त्रों से उसी प्रकार आहुति देवें—

प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः स्वाहा ॥१॥
पृथिव्यै स्वाहा ॥२॥ अग्नये स्वाहा ॥३॥
अन्तरिक्षाय स्वाहा ॥४॥ वायवे स्वाहा ॥५॥
दिवे स्वाहा ॥६॥ सूर्याय स्वाहा ॥७॥
दिग्भ्यः स्वाहा ॥८॥ चन्द्राय स्वाहा ॥९॥
नक्षत्रेभ्यः स्वाहा ॥१०॥ अद्भ्यः स्वाहा ॥११॥
वरुणाय स्वाहा ॥१२॥ नाभ्यै स्वाहा ॥१३॥
पूताय स्वाहा ॥१४॥ वाचे स्वाहा ॥१५॥
प्राणाय स्वाहा ॥१६॥ प्राणाय स्वाहा ॥१७॥
चक्षुषे स्वाहा ॥१८॥ चक्षुषे स्वाहा ॥१९॥

श्रोत्राय स्वाहा ॥२०॥ श्रोत्राय स्वाहा ॥२१॥
लोमभ्यः स्वाहा ॥२२॥ लोमभ्यः स्वाहा ॥२३॥
त्वचे स्वाहा ॥२४॥ त्वचे स्वाहा ॥२५॥
लोहिताय स्वाहा ॥२६॥ लोहिताय स्वाहा ॥२७॥
मेदोभ्यः स्वाहा ॥२८॥ मेदोभ्यः स्वाहा ॥२९॥
माꣳसेभ्यः स्वाहा ॥३०॥ माꣳसेभ्यः स्वाहा ॥३१॥
स्नावभ्यः स्वाहा ॥३२॥ स्नावभ्यः स्वाहा ॥३३॥
अस्थभ्यः स्वाहा ॥३४॥ अस्थभ्यः स्वाहा ॥३५॥
मज्जभ्यः स्वाहा ॥३६॥ मज्जभ्यः स्वाहा ॥३७॥
रेतसे स्वाहा ॥३८॥ पायवे स्वाहा ॥३९॥
आयासाय स्वाहा ॥४०॥ प्रायासाय स्वाहा ॥४१॥
संयासाय स्वाहा ॥४२॥ वियासाय स्वाहा ॥४३॥
उद्यासाय स्वाहा ॥४४॥ शुचे स्वाहा ॥४५॥
शोचते स्वाहा ॥४६॥ शोचमानाय स्वाहा ॥४७॥
शोकाय स्वाहा ॥४८॥ तपसे स्वाहा ॥४९॥
तप्यते स्वाहा ॥५०॥ तप्यमानाय स्वाहा ॥५१॥
तप्ताय स्वाहा ॥५२॥ घर्माय स्वाहा ॥५३॥
निष्कृत्यै स्वाहा ॥५४॥ प्रायश्चित्यै स्वाहा ॥५५॥
भेषजाय स्वाहा ॥५६॥ यमाय स्वाहा ॥५७॥
अन्तकाय स्वाहा ॥५८॥ मृत्यवे स्वाहा ॥५९॥
ब्रह्मणे स्वाहा ॥६०॥ ब्रह्महत्यायै स्वाहा ॥६१॥
विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥६२॥
द्यावापृथिवीभ्याꣳ स्वाहा ॥६३॥ —यजुः० अ० ३९ ॥

इन ६३ तिरसठ मन्त्रों से ६३ तिरसठ आहुति पृथक्–पृथक् देके, निम्नलिखित मन्त्रों से आहुति देवें—

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः ।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वाहा ॥१॥

सोम एकेभ्यः पवते घृतमेक उपासते ।
येभ्यो मधु प्रधावति तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥२॥
ये चित्पूर्व ऋतसाता ऋतजाता ऋतावृधः ।
ऋषींस्तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात् स्वाहा ॥३॥

तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।
तपो ये चक्रिरे महस्तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥४॥
ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो ये तनूत्यजः ।
ये वा सहस्रदक्षिणास्तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥५॥
स्योनास्मै भव पृथिव्यनृक्षरा निवेशनी ।
यच्छास्मै शर्म सप्रथाः स्वाहा ॥६॥
अपेमं जीवा अरुधन् गृहेभ्यस्तं निर्वहत परि ग्रामादितः ।
मृत्युर्यमस्यासीद्दूतः प्रचेता असून् पितृभ्यो गमयां चकार स्वाहा ॥७॥
यमः परोऽवरो विवस्वांस्ततः परं नाति पश्यामि किं चन ।
यमे अध्वरो अधि मे निविष्टो भुवो विवस्वानन्वाततान स्वाहा ॥८॥
अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वा सवर्णामदधुर्विवस्वते ।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः स्वाहा ॥९॥
इमौ युनज्मि ते वह्नी असुनीताय वोढवे ।
ताभ्यां यमस्य सादनं समितीश्चाव गच्छतात् स्वाहा ॥१०॥

—अथर्व० का० १८ । सू० २॥

इन दश मन्त्रों से दश आहुति देकर—

अग्नये रयिमते स्वाहा ॥१॥
पुरुषस्य सयावर्यपेदघानि मृज्महे ।
यथा नो अत्र नापरः पुरा जरस आयति स्वाहा ॥२॥
य एतस्य पथो गोप्तारस्तेभ्यः स्वाहा ॥३॥
य एतस्य पथो रक्षितारस्तेभ्यः स्वाहा ॥४॥
य एतस्य पथोऽभिरक्षितारस्तेभ्यः स्वाहा ॥५॥
ख्यात्रे स्वाहा ॥६॥
अपाख्यात्रे स्वाहा ॥७॥
अभिलालपते स्वाहा ॥८॥
अपलालपते स्वाहा ॥९॥
अग्नये कर्मकृते स्वाहा ॥१०॥
यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहा ॥११॥
अग्नये वैश्वानराय सुवर्गाय लोकाय स्वाहा ॥१२॥

आयातु देवः सुमनाभिरूतिभिर्यमो ह वेह प्रयताभिरक्ता।
आसीदताꣳसुप्रयते ह बर्हिष्यूर्जाय जात्यै मम शत्रुहत्यै स्वाहा ॥१३॥
योऽस्य कौष्ठ्य जगतः पार्थिवस्यैक इद्वशी ।
यमं भङ्ग्यश्रवो गाय यो राजाऽनपरोध्यः स्वाहा ॥१४॥
यमं गाय भङ्ग्यश्रवो यो राजाऽनपरोध्यः ।
येनाऽऽपो नद्यो धन्वानि येन द्यौः पृथिवी दृढा स्वाहा ॥१५॥
हिरण्यकक्ष्यान्त्सुधुरान् हिरण्याक्षानयःशफान् ।
अश्वाननः शतो दानं यमो राजाभितिष्ठति स्वाहा ॥१६॥
यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत् ।
यमाय सर्वमित्तस्थे यत् प्राणद्वायुरक्षितं स्वाहा ॥१७॥
यथा पञ्च यथा षड् यथा पञ्चदशर्षयः ।
यमं यो विद्यात् स ब्रूयाद्यथैक ऋषिर्विजानते स्वाहा ॥१८॥
त्रिकद्रुकेभिः पतति षडुर्वीरेकमिद् बृहत् ।
गायत्री त्रिष्टुप् छन्दाꣳसि सर्वा ता यम आहिता स्वाहा ॥१९॥
अहरहर्नयमानो गामश्वं पुरुषं जगत् ।
वैवस्वतो न तृप्यति पञ्चभिर्मानवैर्यमः स्वाहा॥२०॥
वैवस्वते विविच्यन्ते यमे राजनि ते जनाः ।
ये चेह सत्येनेच्छन्ते य उ चानृतवादिनः स्वाहा ॥२१॥
ते राजन्निह विविच्यन्तेऽथा यन्ति त्वामुप ।
देवांश्च ये नमस्यन्ति ब्राह्मणांश्चापचित्यति स्वाहा ॥२२॥
यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे देवैः संपिबते यमः ।
अत्रा नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति स्वाहा ॥२३॥
उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोक निदधन्मो अहꣳरिषम्।
एताꣳ स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादनात् ते मिनोतु स्वाहा॥२४
यथाऽहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्त्तव ऋतुभिर्यन्ति क्लृप्ताः ।
यथा नः पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूꣳषि कल्पयैषाꣳ स्वाहा ॥२५॥
न हि ते अग्ने तनुवै क्रूरं चकार मर्त्यः ।
कपिर्बभस्ति तेजनं पुनर्जरायुर्गौरिव ।
अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुध्या रयिम् ।
अप नः शोशुचदघं मृत्यवे स्वाहा ॥२६॥

—तैत्ति० प्रपा० ६। अनु० १।१०॥

इन २६ छब्बीस आहुतियों को करके, ये सब **(ओम् अग्नये स्वाहा) इस मन्त्र से लेके (मृत्यवे स्वाहा) तक १२१ एक सौ इक्कीस आहुति** हुईं, अर्थात् ४ चार जनों की मिलके ४८४ चार सौ चौरासी और जो दो जने आहुति देवें तो २४२ दो सौ बयालीस । यदि घृत विशेष हो तो पुनः इन्हीं १२१ एक सौ इक्कीस मन्त्रों से आहुति देते जायें, यावत् शरीर भस्म न हो जाय तावत् देवें ।

जब शरीर भस्म हो जावे, पुनः सब जने **वस्त्र प्रक्षालन स्नान करके जिस के घर में मृत्यु हुआ हो उस के घर की मार्जन, लेपन, प्रक्षालनादि से शुद्धि करके, पृष्ठ ७-११ में लिखे प्रमाणे स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण का पाठ और पृष्ठ ४-६ में लिखे प्रमाणे ईश्वरोपासना करके, इन्हीं स्वस्तिवाचन और शान्तिकरण के मन्त्रों से, जहां अङ्क, अर्थात् मन्त्र पूरा हो, वहां 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करके सुगन्ध्यादि मिले हुए घृत की आहुति घर में देवें** कि जिस से मृतक का वायु घर से निकल जाय और शुद्ध वायु घर में प्रवेश करे और सब का चित्त प्रसन्न रहे । **यदि उस दिन रात्रि हो जाये तो थोड़ी सी [आहुति] देकर, दूसरे दिन प्रातःकाल उसी प्रकार स्वस्तिवाचन और शान्तिकरण के मन्त्रों से आहुति देवें ।**

तत्पश्चात् जब तीसरा दिन हो तब मृतक का कोई सम्बन्धी श्मशान में जाकर चिता से अस्थि उठाके उस श्मशान भूमि में कहीं पृथक् रख देवे । **बस, इसके आगे मृतक के लिये कुछ भी कर्म कर्तव्य नहीं है,** क्योंकि पूर्व **(भस्मान्तꣳ शरीरम्)** यजुर्वेद के मन्त्र के प्रमाण से स्पष्ट हो चुका है कि दाहकर्म और अस्थिसञ्चयन से पृथक् मृतक के लिए दूसरा कोई भी कर्म-कर्त्तव्य नहीं है । हां, यदि वह सम्पन्न हो तो अपने जीते जी, वा मरे पीछे उस के सम्बन्धी वेदविद्या वेदोक्त धर्म का प्रचार, अनाथपालन, वेदोक्त धर्मोपदेश की प्रवृत्ति के लिए चाहे जितना धन प्रदान करें, बहुत अच्छी बात है ।।

इति मृतक-संस्कारविधिः समाप्तः ।।